हिंदी और तेलुगु साहित्य में पर्यावरण विमर्श: तुलनात्मक दृष्टि

डॉ दुर्गा शारदा सी एच
नेवी चिल्ड्रन स्कूल,
विशाखापट्नम
दू.भा. : 9502068700

हिन्दी शब्द पर्यावरण का 'परि' तथा 'आवरण' शब्दों का युग्म है। 'परि' का अर्थ हैं -'चारों तरफ' तथा 'आवरण' का अर्थ हैं -'घेरा' अर्थात प्रकृति में जो भी चारों ओर परिलक्षित है यथा - वायु, जल, मृदा, पेड़पौधे तथा प्राणी आदि सभी पर्यावरण के अंग हैं।- हमारी धरती और इसके आसपास के कुछ हिस्सों को पर्यावरण में शामिल किया जाता है। इसमें सिर्फ मानव ही नहीं, बल्कि जीवपौधे भी शामिल किए गए हैं। यहां तक कि निर्जीव वस्तुओं को भी पर्यावरण का -जंतु और पेड़- हिस्सा माना गया है। कह सकते हैं, धरती पर आप जिस किसी चीज को देखते और महसूस करते हैं, वह पर्यावरण का हिस्सा है। इसमें मानव, जीवजंतु-, पहाड़, चट्टान जैसी चीजों के अलावा हवा, पानी, ऊर्जा आदि को भी शामिल किया जाता है।

वेदों में निम्न श्लोक सुप्रसिद्ध है –

ॐ द्यो: शान्तिरंतारिक्षं शान्ति:
पृथ्वी शान्तिराप: शान्तिरौशाधिय: शान्ति: ।
वनस्पतय: शान्ति: विश्वेदेवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति:
सर्व शान्ति: शान्तिरेव सा मा शान्तिरेधि । ।
[भावार्थ: द्युलोक, अंतरिक्ष, पृथ्वी, जल, औषधि , वनस्पति, सम्पूर्ण देवता, ब्रह्मस्थ, शान्ति, सर्वत्र व्याप्त शान्ति तथा जो वास्तविक शान्ति है, वह मुझे प्राप्त है ।]

इस श्लोक से हमें यह विदित होता है कि जब तक उक्त सभी तथ्यों को शान्ति नहीं मिलेगी, तब तक मनुष्य मात को शान्ति नहीं मिल सकती । मनुष्य का जीवन क्षणिक है । भौतिक तथ्य भी अशाश्वत है किन्तु मनुष्य का अस्तित्व शाश्वत है । उसका एक विगत है, वर्त्तमान है और भविष्य भी है । इसका स्मरण हमेशा रहना चाहिए ।

जिस प्रकार मनुष्य अपनी मेहनत से संचित सामग्री को सोच-समझकर आवश्यकता पड़ने पर ही व्यय करता है, उसी प्रकार क्या हमारा यह कर्त्तव्य नहीं कि पर्यावरण का उपयोग सोच-समझकर करना चाहिए? ऊपर के श्लोक में भी यही कहा गया है कि जब तक पर्यावरण स्वस्थ है, मनुष्य मात्र को शान्ति है । कितना सोच-समझकर विद्वानों ने इस श्लोक का सृजन किया होगा जिसका गूढार्थ सदियों तक सन्देश देता रहेगा ।

हिंदी साहित्य के अंतर्गत 'पर्यावरण विमर्श' का अंश देखकर अपार प्रसन्नता हुई क्योंकि भूगोल निर्दिष्ट सामग्री का आंकड़े देता है और वनस्पति शास्त्र केवल तथ्यों का प्रयोगात्मक रूप से ही व्याख्या कर पाता है। लेख-निबंधों में पर्यावरण के बारे में सांख्यिकीय आंकड़े ग्राफ या चार्ट वगैरह प्रस्तुत कर लाभ-हानि की सीमित जानकारी ही दे पाते हैं। जिस निराले दृष्टि से पर्यावरण को साहित्य देखता है वह कदाचित ही कोई अन्य शास्त्र देखता होगा। पर्यावरण का सुन्दर वर्णन इसी में संभव हो पाता है। साहित्यकार इसे अपने जीवन के साथ जोड़कर देखता है और बहुत ही मार्मिक रूप से प्रस्तुत करता है। चित्रकार के चित्रों में भी कमी देखी जा सकती है। साहित्यकार के साहित्य में, उनके वर्णनों में, हम भाव-विभोर हो उठते हैं। साहित्य की दृष्टि से हम संसार को देखते हैं। पाठक, श्रोता या दर्शक का मन भी कवि की तरह प्रसन्न हो जाता है। कविताओं में पर्यावरण, प्रकृति चित्रण, ऋतुओं का वर्णन सुकुमार और वर्णनातीत होते हैं।

"बासों का झुरमुट, संध्या का छुटपुट
हैं चहक रहीं चिड़ियाँ टी वी टी टी टूट-टूट
ये नाम रहे निज घर का मग
कुछ भ्रमर्जीवी घर डगमग डग
माटी है जीवन भारी पग "

इन पंक्तियों में बासों के झुरमुट में चहकती हुई चिड़ियों को, थके हारे मजदूरों को विरोधपूर्ण स्थिति के माध्यम से संध्या का अत्यंत व्यंजक स्वरूप प्रस्तुत किया है। कविताएँ प्रकृति से ओत-प्रोत होने के कारण ही सुमित्रानंदन पन्त को प्रकृति के सुकुमार कवि कहा गया है। प्रकृति के प्रति प्रेम, आकर्षण के भाव मनुष्य से जुड़े हुए कड़ी हैं। मनुष्य ही व्यस्तता में पड़कर इस भावना को, सह-अनुभूति के सूक्ष्म कड़ियों को महसूस नहीं कर पा रहा है। पंत जी की कविताओं में अत्यंत सुन्दर प्रकृति दर्शन देती है। मेरा मन मुझसे प्रश्न करता है कि पन्त प्रकृति के कवि हैं, या प्रकृति ने ही उन्हें कवि बनाया है? हम जैसे लोगों को उन्होंने साहित्य के द्वारा जीवन को जोड़कर प्रकृति देखने की दृष्टि प्रदान किया है। श्रीनाथ सिंह की यह कविता छोटे-छोटे कक्षाओं में स्मरण कराया जाता रहा है। जीवन का सम्पूर्ण सार जैसे निम्न पंक्तियों में समेट कर रख दिया हो, जो बच्चों के स्तर का तत्वज्ञान से कम नहीं है। यथा -

फूलों से नित हँसना सीखो, भौरों से नित गाना,
तरु की झुकी डालियों से नित सीखो शीश झुकाना।
सीखो हवा की झोंकों से कोमल भाव बहना,
लता और पेड़ों से सीखो, आपस में मिल जाना।
पतझड़ में पेड़ों से सीखो, दुःख में धीरज धरना,
मछली से सीखो, स्वदेश के लिए तड़प-तड़प कर मरना।।

धरती हमें संयम सिखाती है तो आकाश हमें हृदय विशाल रखने (क्षमाशील) को कहती है। यह दर्शन केवल एक सीमित समय तक नहीं अपितु तब तक है जब तक मनुष्य का अस्तित्व है। जब

तक मनुष्य उक्त बातों का ध्यान रखा या रखेगा, सुरक्षित रहेगा वरन् समस्याओं का आह्वान करेगा। वर्त्तमान समय में पर्यावरण का संतुलन लगातार बिगड़ता जा रहा है। विपरीत व चुनौतीपूर्ण परिस्थितियाँ समस्त मानवजाति के समक्ष है। आश्चर्य की बात यह है कि मनुष्य इन संभी समस्याओं का निदान जानकर भी अनजान होकर निश्चिन्त रह रहा है। इन सब के जिम्मेदार क्या हम स्वयं नहीं? हम मनुष्य कितने संवेदनहीन हो गए हैं। आज की परिस्थिति को दृष्टि में रखकर ही कदाचित कवि भावुक होकर निम्न रचना का सृजन किया होगा। यथा –

మంచు కరిగిపోతే, నదులు ఎండిపోతే

మేఘాలు నిండకపోతే, వర్షపు చినుకు రాలకపోతే,

ఇంకా ఏమి మిగిలిఉంది మాకు ఈ భూమి మీద

పంట పండలేదని.... కడుపు నిందలేదని... ఆత్మహత్యలు తప్ప!

[भावार्थ – यदि बर्फ न गले, नदियाँ न भर पाएँ, मेघ न भरे, वर्षा की बूँद न बरसे..., अब क्या बचा है इस भूमि पर हमारे लिए, फसल के न उगने के कारण.... पेट न भर पाने के कारण..... आत्महत्याओं के सिवाय?]

पर्यावरण और प्रकृति की सौंदर्य के अनुरूप ही कविताओं का सृजन होता है। दुल्हल-सी सजी धरती और विधवा-सी निष्प्राण सी धरती पर सुन्दर कविताएँ, काव्य कैसे बन सकते हैं। छाया वाद के कवि यदि अभी होते, तो कदाचित ही रचनाओं की शैली अलग होतीं। परिस्थितिओं ने कवियों को भक्तिकवि, भावाकवि, राष्ट्रकवि, विप्लवकवि आदि बनाया। आज की परिस्थिति हमें केवल 'स्वच्छ भारत अभियान, 'बेटी बचाओ बेटी पढाओ', 'आरक्षण हटाओ देश बचाओ' जैसे नारों पर ही आकर ख़त्म हो गया। विडंबना यह है कि मनुष्य अपनी मनुष्यता को ही भूल गया। उसे उसके कर्तव्यों को स्मरण कराना पड़ रहा है। उनके प्राकृतिक धर्म को जगाने का काम ही प्रधान हो गया है। आज मनुष्य मात्र को व्यक्तिगत समस्याएँ, स्वार्थ को छोड़कर बाकी बातें निष्प्रयोजन लगते हैं। क्या यह पशु तुल्य व्यवहार नहीं? ।

जब पर्यावरण का संतुलन बिगड़ जाता है, तो किस प्रकार की संभावनाएँ हो सकती हैं, यह मनुष्य से बेहतर कौन जानता है? किन्तु क्या स्वार्थ के चलते अपने विवेक पर अमीरी, व्यस्तता का नाम देकर 'केवल मैं', 'सिर्फ एक बार', 'उस बारे में सोचने के लिए कई लोग हैं' जैसे बहाने ढूँढकर हम पर्यावरण को अनदेखा नहीं कर रहें? उसे नगण्य और अनावश्यक अंश नहीं मान रहें? क्या अतिवृष्टि और अनावृष्टि के कर्ता-धर्ता हम नहीं?

आजन्मांतर हम इस धरती पर विचरते रहते हैं, उसका परिपूर्ण रूप से निचोड़-निचोड़ कर उपयोग करते हैं, किन्तु क्या हम दिन में एक बार भी महसूस करते हैं कि हमने आज पर्यावरण का क्या अच्छा या बुरा किया? हमने पढ़ा है कि धरती घूमती है, ऋतुएँ बनाती हैं। क्या हमने घूमती धरती को महसूस किया है? नही! किन्तु हमने ऋतुओं को महसूस करते हैं। हमारी दृष्टि नहीं पहुँच सकती

तो क्या अंतरिक्ष नहीं है? हवा दिखाई नहीं देती, या मुफ्त में हम उपभोग करते हैं तो क्या मूल्यहीन हो गई है? क्या हम हवाओं में विष नहीं घोल रहें? पानी के श्रोत ख़त्म हो जाएँगे तो क्या हम उन्हें भर पाएँगे? हर ऋतु हमें अलग-अलग सामग्री खाने, रहने, आनंद पाने के लिए देती है। बदले में हम पर्यावरण को क्या दे रहें हैं? क्या हम एहसान फरामोश नहीं? अपने आप को बुद्धिमान समझाने वाला मनुष्य क्या उक्त सभी का भरपाई कर पाएगा? एक सीमा के बाद जन्म देने वाली माँ भी कुपित हो जाती है और गुस्सा करती है किन्तु हमने अपनी इतनी नुकसान कर डाली है कि जैसे अपने पाँव पे स्वयं ही कुल्हाड़ी दे मारी हो।

पर्यावरण का संतुलन स्वस्थ नहीं रहेगा तो स्वस्थ कवि और कविताओं का भी अभाव देखने को मिलेगा। पर्यावरण का प्रभाव प्रत्येक पहलू पर देखने को मिलेगा। यही तथ्य आप उक्त दोनों कविताओं में देख सकते हैं। पहली कविता सकारात्मकता को दर्शाती है तो दूसरी कविता नकारात्मकता को दर्शाती है। इसीलिये आज का साहित्य इतना प्रभावशाली नहीं लगता जितना पहले लिखा गया साहित्य। वे ही नित्य नूतन लगते हैं। आधुनिकता के नाम पर लिखी गई साहित्यिक रचनाओं में वो बात नहीं जो मनुष्य के जीवन को भी बदल देने की क्षमता होती थी।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मनुष्य में जब तक मनुष्यता नहीं होगी, उसकी रचनाएँ भी उतनी ही निर्वीर्य और बेकार होगी। साहित्य चाहे किसी भी भाषा में हो, उसकी कद्र तभी होगी जब उसमें मानवीय प्रवृत्तियाँ और संवेदनशीलता होगी। संसार में कई साहित्यिक कृतियाँ ऐसी हैं जिनका कई भाषाओं में अनुवाद हुआ है। वे सभी साहित्यिक कृतियाँ कदाचित इसीलिये प्रशिद्ध एवं प्रभावशाली हुई होंगी क्योंकि उसमें मनुष्य मात्र को सीखने के लिए आवश्यक बातें होगी। हमें प्रण करना चाहिए कि केवल सांख्यिक दृष्टि से कृतियों का सृजन न करते हुए, मानव समाज व मानवीय प्रवृत्तियों को जागृत करने के लिए स्तरीय रचनाएँ लिखें ।